

प्रस्तावना ।



इस इश्वरीय सृष्टिम माय यावत् प्राणीवर्ग ऐसाही देखने में आताहै जो कि अपनी मातृभाषासे स्पष्ट वाग्व्यवहार करता हुआ परस्पर एक दूसरेके तात्पय्यके बोधनमें समथ हाताहै । उसमें भी इस पुरुष वर्गमें कहीं कहीं ऐसी चमत्कृति देखनेमें आती है कि समय २ पर यह ऐसा उचित तथा पक्षपातरहित न्यायगर्भित बाटना है जो कि आवाळ वृद्ध राजासे लेकर एक तक उसको सभी ५५ शासनावत् या राज शासनावत् बुद्धि पूर्वक स्वीकार करतहै । उदाहरण क लिय जैसे इस गत १८ शताब्दीमें होने वाला (गिरिधर) उपनामक हरिदास सत्तक उदासीन साधु हुआहै वैसे समयानुरूप स्वमान्य उचितवक्ता शीमहोना कठिनहै यह जोर किसी शास्त्रका विद्वान् या अनेक ग्रन्थोंका रचयिता मग्यात कवि तथा किन्तु एक साधारण मकृतिका अनुभवी तथा शान्त विरक्त साधु महात्मा था मातृ भूमि इसकी पचाव तथा साधुरेशसे विचरना इसका माय गगानीके तीरपर हुआ करता था यह विरक्त होनेसे अपनी रचना पे लिखने पत्रेका बसडानही करताथा किन्तु समय २ पर अपन भावका शीम कविकी तरह कुण्डली या छन्दम कहा करताथा कभी२कोई समीपवर्ती महात्मा उसको रोचक जानकर सर्वोपकारार्थे दिसाभीटेता तो एकसे दूसरा उससे फिर दूसरा

श्रीगणेशाय नमः ।

गिरिधररायकृत-

* कुण्डलिया, *



प्रथमभाग १

गोहा-गक गहन गजमुख नन्द मुमति मुन्द गणराज ।

मूषक बाहन नाय गिर, पूजन आपन बाज ॥

कुण्डलिया ।

जय जय श्री वेङ्कटरमण शेपाचल महाराज ।

अष्ट सिद्धि नव निडिदा भक्तन सारन काज ॥

भक्तन सारन काज करो दाया अपनी विभु ।

जन उपकारी काज आज श्री सेमराज प्रभु ॥

गिरिधरकृत कुण्डलीरयात तुम्हरे पद नय नय ।

चंचल चतुर सुजान काज तुवपद करि जय जय ॥

जियनो मरिवो ये उभै नहि है अपने हाथ ॥

जानत है वे नन्दसुत विहँसत बछरनसाथ ॥

बेटा गिरो वापसों, करि तिरियन को नेहु ।
 लटापटी होनेलगी मोहि जुदा करिदेहु ॥
 मोहि जुदा करिदेहु घरीमा माया मेरी ।
 लेहो घर अरु द्वार करों मे फजिहत तेरी ।
 कह गिरिधर कविराय सुनो गदहाके लेटा ।
 समय परचोहै आय वापसे झगरत बेटा ॥ ५ ॥
 रही न रानी कैकयी अमर भई यहवात ।
 कवनपूर्वले पापते बन पठयो जगतात ॥
 बन पठयो जगतात कन्त सुरलोक सिधारेउ ।
 जेहिसुत काजे मरेउ राउ नहि वदन निहारेउ ॥
 कह गिरिधर कविराय भई यह अकथकहानी ।
 यश अपयश रहिगयउ रहीनहि केकयिरानी ॥ ६ ॥
 साई ऐसे पुत्र से बाझरहै वरु नारि ।
 गिरिबेटे वापसे जाय रहै ससुरारि ॥
 जायरहै ससुरारि नारिके नाम बिकाने ।
 कुलके धर्म नशाय और परिवार नशाने ॥

भापाचालपिचानि बहुरि उतपात न होई ।
जो कुछ लगे दोष अरे सुन आवै रोई ॥
कह गिरिधर कविराय समयपर देत हैगारी ।
मरापुरुष जिय जान जौ पर घर गइनारी ॥ १० ॥
काचरोटी कुचकुची, परतीमाछी सार ।
फुहर बही सराहिये, परसत टपकै लार ॥
परसत टपकै लार झपटि लरिका सोचावै ।
चूतर पोंछै हाथ दोउकर शिर सजुवावै ॥
कह गिरिधर कविराय फुहर के याहीधेना ।
कजरौटा नहि होइ लुकाठे आजै नैना ॥ ११ ॥
चिन्ता ज्वाल अरीरकी, दाह लगे न बुझाय ।
प्रकट धुवा नहि देखिये, उरअन्तर धुंधुवाय ॥
उर अन्तर धुंधुवाय जै जस काचकी भट्टी ।
रक्तमास जरि जाइ रहै पाजरिकी ठट्टी ॥
कह गिरिधर कविराय सुनोरे मेरे मिन्ता ।
वे नर कैसे जिये जाहि व्यापी है चिन्ता ॥ १२ ॥

यह जानीजस जलजई वादर श्याम विशेषि ॥
 वादर श्याम विशेषि देखि तोताकोधायो ।
 एकसमय सकटपरे को न काके परआयो ॥
 कह गिरिधर कविराय धुवाको यह फल पायो ।
 जो जलको तृगयो सोइ नयननजलआयो ॥ १५ ॥
 साईं पर न कीजिये गुरु पण्डित कवियार ।
 बेटा बनिता पँवरिया यज्ञ करावनहार ॥
 यज्ञ करावनहार राजमन्त्री जो होई ।
 विप्रपरोसी बँध आपको तपे रसोई ॥
 कह गिरिधर कविराय युगनते यह चलिआई ।
 इन तेरहसों तरहदिये बनि आवे साईं ॥ १६ ॥
 बेरी बँधुवा बानियां ज्वारी चोर लवार ।
 बटपारी रोगी ऋणी नगनारिको यार ॥
 नगरनारिको यार भूले परतीत न कोजे ।
 साँ साँगेसाइ चित्तमें एक न दीजे ॥
 कह गिरिधर कविराय परे आवे अनगरी ।

ऋण उधारकै गीति मागते मारन धावै ॥
 कह गिरिधर कविराय जानिरहै मनमें रुठा ।
 बहुत दिना हेजाय कहै तेरो कागज झूठा ॥ २० ॥
 सोना लादन पिवगये सुना करिगये देश ।
 सोना मिले न पिव मिले रूपाह्वगे केश ॥
 रूपा ह्वगे केश रोय रँग रूप गँवावा ।
 सेजनको विश्राम पिया विन करहुँ न पावा ॥
 कह गिरिधर कविराय लोन विन सँ अलोना ।
 बहुरि पियाघर आव कहा करिहौ लैसोना ॥ २१ ॥
 मोती लादन पिवगये धुरपटना गुजरात ।
 मोती मिले न पिवमिले युग भरि बीती रात ॥
 युगभरि बीती रात निरहिनी आनि सतावै ।
 चाँकिपरी ब्रजनारि पियाको लिखा न आवै ॥
 कह गिरिधर कविराय गोपिका यहकह रोती ।
 आगि लगे वह देश जहा उपजतिहै मोती ॥ २२ ॥
 जाकी धन धरती हरि ताहि न लीजै सम ।

बर्दाकिये काहोय नदीको तीर न छोड़ा ॥ २५ ॥
 दौलत पाइ न कीजिये, सपनेमें अभिमान ।
 चंचलजल दिन चारिको, ठाउँ न रहत निदान ॥
 ठाउँ न रहत निदान जियत जगमें यशलजै ।
 माँठे वचन सुनाय विनय सगरीकी कीजै ॥
 कह गिरिधर कविराय अरे यह सबघटतौलत ।
 पाहुन निशि दिन चारि रहत सबहीकेदौलत २६॥
 गुणके गाहक सहस्रनर, बिनु गुण लहै न कोय ।
 जैसे कागा कोकिला शब्द सुनै सब कोय ॥
 शब्द सुनै सकोय कोकिला सनै सुहावन ।
 दोऊको यहरग काग सब भये अपावन ॥
 कह गिरिधर कविराय सुनोहो ठाकुर मनके ।
 बिनु गुण लहें न कोइ सहस्र नर गाहकगुणके ॥ २७ ॥
 मित्रविछोहा अतिकठिन, मातिदीजै करतार ।
 वाके गुण जब चित चढे, वर्षत नयन अपार ॥
 वर्षत नयन अपार मेघ सावन झरिलाई ।

जेहि हाथे हाथी हन्यो तेहि मेढक जनिमार ॥
 तेहि मेढक जनिमार कुलहि जनि दोष लगावै ।
 बरु फाँका करि मरै जगतमें शोभापावै ॥
 कह गिरिधर कविराय हंसै जम्बुक औ दिगिनि ।
 समय परेकी बात सिद्धका सिसवै सिहिनि ॥ ३१ ॥
 हिरना विरझेड सिंहसे औझरसुरी चलाय ।
 झारखण्ड झीनापरचो सिंहा चलोपराय ॥
 सिंहा चलोपराय समय समस्तथ विचारी ।
 कलिहि कालमालाइ हंसै हंसिकै पगधारी ॥
 कह गिरिधर कविराय सुनोहो मेरे अरना ।
 आजुगई करिजाय सकारे मै की हरना ॥ ३२ ॥
 बगुला झपटचो बाजपर बाज रद्वड शिरनाय ।
 दै औंधियारी पगुवघ्यो चेटक दैफहराय ॥
 चेटकद फहराय धनी निनु कौन चलावै ।
 हरे साकरी डार करै जो जो मन भावै ॥
 कह गिरिधर कविराय सुनो पश्चिम के नकुला ।

नैसा रहा न पास यार मुखसे नहि बोलै ॥
 कहगिरिधर कविराय जगत यहि लेखाभाई ।
 विनु बेगरजी प्रीति यार विरला कोइसाई ॥३६॥
 दादुरेकर दरेरपर लै फणपति निजशीश ।
 समय आपनो जानिकै मनहि न लायो ईश ॥
 मनहि न लायोईश शीशपर बाल्यो भाई ।
 परचो आपदाआय लाजपति सवै गँवाई ॥
 कहगिरिधर कविराय कहाँ लै आनी आदर ।
 गुणकीमति घटिगई शीशपर बोलै दादुरा ॥३७॥
 कँचुवा नागिनिसे कहै सुनो न हेतु अचार ।
 हम तुमसे अस रीतिहै लाख भाति व्यवहार ।
 लाखभाति व्यवहार व्याह सावनमें कीजै ।
 द्वार चैतको घाम कटक दल हमरोछीजै ॥
 कह गिरिधर कविराय कहासे आये हेतुवा ।
 शेषनाग मरिजाय नागिनिहि व्याहैकँचुवा ॥३८॥
 कोईभँवर गुलाबतजि गये जो हुरहुरपास ।

कुण्डलिया-गि० । (२१)

हां बिकानो आय छेदकारि कटि में बाध्यो ।
 नहरदी बिनलोन मास ज्यों फूहर राध्यो ॥
 ह गिरिधर कविराय कहा लागि धरिये धीरा ।
 नकीमत पटिगई यह कहि रोयोहीरा ॥ ४१ ॥
 हिये लटपट काटिदिन परु पावै मा सोय ।
 नह न बाकी बैठिये जो तरु पतरो होय ॥
 ते तरु पतरो होय एकदिन पोरागैह ॥
 ॥ दिन बहै बयारि दृष्टि तब जरसे जहै ॥
 ह गिरिधर कविराय छाह मोटेको गहिये ।
 ता सब क्षरिजाय तऊ छाह मा रहिये ॥ ४२ ॥
 व नीर न सगवरो दूदस्वाति की वाञ्छ ।
 हरि वृण नहि चरि सके जो व्रतकर पचाञ्छ ॥
 ते व्रत करे पचाञ्छ विपुल गन पुत्थ बिदारै ।
 पुरुष तजै न पीर जीव बरु कोठ मारै ॥
 ह गिरिधर कविराय जीवनोपक भरिजावै ।
 तत बरु मरिजाय नीरसरवर नहि पावै ॥ ४३ ॥

कहगिरिधर कविराय नवै जस बन्दर भछा ।
 तोसदान बन्दूक हाथमें पत्थरकछा ॥ ४६ ॥
 साई जगमें योगकरि मुक्ति न जाने कोय ।
 जय नारी गवने चली चटीपाटकीरोय ॥
 चटी पाटकीरोय जान नहिं कोई जीकी ।
 रही सुरति तनछाय सुछतिया अपने हियकी ॥
 कह गिरिधर कविराय अरे जनिहोहु अनारी ।
 मुँहसे फेरे बनाय पेटमें बिनवै नारी ॥ ४७ ॥
 दोहा—नवलनारि सेवै नहीं, कहे पुकारि पुकारि
 जस पिय तुम हयसन करीवै सेकरव प्रचारि ॥

कुण्डलिया ।

गटपतियनको धम्मंहे करै डडनको ध्यान ।
 निमीदोज रेनीकरै मनका राखोजान ॥
 मनकाराखोजान किलेपर तोष चटावो ।
 कोश कोश को गिरद काटि मैदान करावो ।
 कह गिरिधर कविराय राज राजनके साई ।

महो निपट गरीब कहा घर बैठे सइहौ ॥
 कह गिरिधर कविराय बात सुनिये हो हूसा ।
 गाउ दिननका फेर निलारिहि सिसवै मृसा ॥५१॥
 कौवाकहे मरालसे कहाजाति कहगोत ॥
 मएसे बढ रूपिया कही न जगमें होत ॥
 कहू न जगमें होत महामैले मलसाना ।
 ठि कचेहरी जाय वेद मयांद न जाना ॥
 कह गिरिधर कविराय सुनोहो पछी होवा ॥
 मन्य मुल्क यह देश जहाके राजा कौवा ॥५२॥
 माकरि गिरगिटसे कहे का मारतिहो सान ।
 पो तुम्हरे हिरदै न मई सो हमहूँ अउ जान ॥
 पो हमहूँ अउ जान करव हम धनके जाला ।
 तहा न तुम्हरी डीठि तहा अउ हमरी जाला ॥
 कह गिरिधर कविराय बात सुनिये हो धाकर ।
 लगे चपेटा मोर तहा नहि तहँवा माकर ॥५३॥
 नयना लगन अपारह पटा अपटहे जाय ।

प्रवहारी जो होय तऊ तन मन धन दाजि ॥५६॥
 अंड घोडे आछतहि गदहन आयो राज ।
 जोआ लीजे हाथमें दूरिकीजियेराज ॥
 दूरिकीजिये राज राज पुनि ऐसो आयो ।
 सह कीजिये कैद स्यार गजराज चढ़ायो ॥
 यह गिरिधर कविराय जहा यह वृद्धि बढाई ।
 प्रहा न कीजे भोर साझ उठि चलिये साई ॥५७॥
 आई अवसरके पड़े कौन सहै दुसद्वन्द ।
 आय निकाने डोमघर वै राजा हरिचन्द ॥
 राजा हरिचन्द्र करै मरघट रसवारी ।
 फरे तपस्वी वेप फिरे अर्जुन बलधारी ॥
 यह गिरिधर कविराय तपै वह भीम रसोई ।
 होन करै घटिकाम परै अवसरके साई ॥ ५८ ॥
 इसमें चले निदेशकहँ काची लादि कुम्हार ॥
 अपांरुतु बैरिनिभई वादर कीन्होमार ॥
 वादर कीन्होमार इतै उत कलुनहि सृष्टे ।

म अकाशमें रहो हमारो पृथ्वी द्वारो ॥
 सह गिरिधर कविराय सुनोहो मनरेमगनृ ।
 ढिऐढि बतलाहि सूर्यके सन्मुख जुगनृ ॥६७॥
 मेना विचारे जो करे सो पाँछे पछिताय ।
 म विगारे आपनो जगमें होत हँसाय ॥
 ममें होत हँसाय चित्तमें चैन न पावे ।
 नपान सन्मान राग रँग मनहि न भावे ॥
 सह गिरिधर कविराय दुख कछु टरत न टारे ।
 टकत हे जिय माहि कियो जो विना विचारे ६८
 मेतो ताहि निसारिदे आगे की सुधि लेइ ।
 मे वनिआवे सहजमें ताहीमें चित देइ ॥
 गहीमें चितदेइ बात जोई वनिआवे ।
 र्जन हँसे न कोइ चित्तमें सता न पावे ॥
 सह गिरिधर कविराय यह करु मन परतीती ।
 गगेको सुखसमुझि होइ बीती सो बीती ॥ ६९॥
 कोई अपने चित्तकी भूलि न कहिये कोइ ।

डाँफजीहतहोय तनो नदियनकी साई ॥ ७२ ॥
 साई सन अरु दुष्टजन इनको यह सुभाव ।
 साल सिचाँन आपनी परबन्धन के दाव ॥
 परबन्धनके दाव साल अपनी सिचबावे ।
 बृडकाटिकैफवे तऊ वह बाज न आवे ॥
 रुह गिरिधर कविराय जरे आपनी कटाई ।
 नलमें परि सरगये तऊ छाड़ी न सुटाई ॥ ७३ ॥
 साई समय न चूकिये यथा शक्तिसन्मान ।
 राजाने को आइहे तेरी पौरि प्रमान ॥
 तेरी पौरि प्रमाण समय असमय तकि आवे ।
 ताको तू मन सोलि अक भरि हृदय लगावे ॥
 रुह गिरिधर कविराय समयामे सुधि आई ।
 शीतल जल फल फूल समयजनि चूकोसाई ७४ ॥
 साई ऐसी हरि करी बलिके द्वारे जाय ।
 सहिले हाथ पसारिके बहुरि पसारे पाँय ॥
 पहुरि पसारे पायँ मतो राजाने बतलौ ।

बड़ा फजीहत होय तनो नदियन की साई ॥ ७२ ॥
 साई सन अरु दुष्ट जन इनको यहै सुभाव ।
 खाल सिचावे आपनी परबन्धन के दाव ॥
 परबन्धन के दाव खाल अपनी सिचवावे ।
 मूढकाटिके फवे तऊ वह वाज न आवे ॥
 कह गिरिधर कविराय जेरे आपनी कटाई ।
 जलमें परि सरगये तऊ छाडी न सुटाई ॥ ७३ ॥
 साई समय न चूकिये यथा शक्तिसन्मान ।
 काजाने को आइहे तेरी पोरि प्रमान ॥
 तेरी पोरि प्रमाण समय असमय तकि आवै ।
 ताको तू मन सोलि अक भरि हृदय लगावै ॥
 कह गिरिधर कविराय समयामें सुधि आई ।
 शीतल जल फल फूल समयजनि चूको साई ७४ ॥
 साई ऐसी हार करी बलिके द्वारे जाय ।
 पहिले हाथ पमारिके बहुरि पसारे पाँय ॥
 बहुरि पसारे पायँ भतो रानाने बतायो ।

१ फिरि फिरि चोरी करें ये फिरि फिरि लपटायँ ॥
 ये फिरि फिरि लपटायँ नेत्र बहुरे भरिआवे ।
 खान पान तनुत्याग रात दिनहीं दुसपावे ॥
 कह गिरिधर कविराय सुनो तुम श्रवणनि नैना ।
 ओग देई अकलक परें जय परवश नैना ॥ ७८ ॥
 साई सुमनपलाश पर सुवा रद्यो जो आय ।
 अलकलीसी चोंचपर मधुकर बैठोजाय ॥
 मधुकर बैठोजाय सुवा तत्काल बचायो ।
 कोटि कष्ट करि पाँय मारि करि छूटन पायो ॥
 कह गिरिधर कविराय बेगि घर वनै बधाई ।
 दीजे विदा पठाअ नियत घर जैये साई ॥ ७९ ॥
 साई तेली तिलन सों कियो नेह निराह ।
 छानि फटक उजर करी दई बड़ाई ताह ॥
 दई बड़ाई ताह पञ्चमहँ सिंगरेजानी ।
 दे कोल्हूमँ पेरि करी येकत्तर घानी ॥
 कह गिरिधर कविराय यही माया प्रभुताई ।

मधुरमिष्ट हम अधिक कलुक जियसे जनि जान्यो ।
 कह गिरिधर कविराय कहत साहवसे रहुवा ।
 तुम नीचे फल बेलि वृक्ष हम ऊचेमहुवा ॥ ८३ ॥
 गुलतुरासों जायकै, वार्ता करत करील ।
 हम तुम सुखे एकसों पूछ देखिये भील ॥
 पूछ देखिये भील भेद जो जानै मेरो ।
 तोहू पूछ बुलाय भेद जो जानै तेरो ॥
 कह गिरिधर कविराय नातरि करिहो हुरा ।
 अज जनि भूलि गुमान करो फिरिहो गुलतुरा ॥ ८४ ॥
 हुक्का बाधो फेट में नै गहि लीन्ही हाथ ।
 चलेराह मे जातहै लिये तमाखु साथ ॥
 लिये तमाखु साथ गैल को धधा भूल्यो ।
 गइ सचिंचिता भूलि आगि देखत मन फूल्यो ॥
 कह गिरिधर कविराय जो यमकर आयो रुक्का ।
 जिय लैगयो जो काल हाथ में रहिगाहुक्का ॥ ८५ ॥
 पगडी सूही बाधि के भयो सिपाही लोग ।

कुण्डलिया गि० । (३९)

अति आतुर नहि होय बहुरि अनखैहे राजा ॥ ८८ ॥
 कृतघन कन्हू न मानहीं कोटि करै जो कोय ।
 सर्वस आगे राखिये तऊ न अपनो होय ॥
 तऊ न अपनो होय भलेकी भली न मानै ।
 कामकाढ़ि चुपरहे फोरि तिहि नहि पहिचानै ॥
 कह गिरिधर कविराय रहत नितही निर्भय मन ।
 मित्र शत्रुना एक दामके लालच कृतघन ॥ ८९ ॥
 मनमोनरायण निगमय कारन कागण रहत ।
 सबधसज्ञा जात पुनि गुण क्रिया असहत ॥
 गुण क्रिया असहत कल्पना सर्व अतीता ।
 नेति नेति करके भई चकृत सुरती गीता ॥
 कह गिरिधर कविराय न नामें सत रज तमो ।
 निरावर्ण इक दाट आपकू आपे नमो ॥ ९० ॥
 गिरिधर सो जो गिरिधरे प्रयत्न शून्य विन सेइ ।
 गिरि कारण मूढम स्थूटतन गिरिधर प्रत्यक वेद ॥
 गिरिधर प्रत्यक वेद जोइ निनहीं प्राप्त ।

कायिक वाचिक मानसी सभी आपनी भूल ॥
 सभी आपनी भूल मोक्षहित करे जुकरनी ।
 ज्यों रविचाहे तेज जाय सद्योतकी शरनी ॥
 कह गिरिधर कवि पुरुष साय सो सभी अनात्म ।
 स्वत सिद्ध अपवर्ग रूप चितधन तु आत्म ९४
 सब साजनदो जगतमें तिनकाहे यह रीत ।
 ज्यों सूचाको अम्र भाग पृष्ठभाग दे मोत ॥
 पृष्ठभाग दे मोत एकतो छिहर करिहं ।
 दूसर तिसे अछादत ततछिन गुन करि भारिहं ॥
 कह गिरिधर कविराय आत्मा एकाहे अमल ।
 निज माया करि बन रयो सोइ साजन सब ९५ ॥
 चिदाविलास प्रपच यह चिदाविवरत चिद रूप ।
 ऐसी जाक दृष्टिहं सो विद्वान अनूप ॥
 सो विद्वान अनूप मदाज्ञानी तत दरसी ।
 निज आत्म विनयेक धारता मुने न करसी ॥
 कह गिरिधर कविराय विवकी त्यागें निद ।

कायिक वाचिक मानसी सभी आपनी भूल ॥
 सभी आपनी भूल मोक्षहित करे जुकरनी ।
 ज्यों रविचाँद तेज जाय खद्योतकी शरनी ॥
 कह गिरिधर कवि पुरुष साध्य सो सभी अनात्म ।
 स्वतः सिद्ध अपवर्ग रूप चित्तघन तू आत्म ९४
 सल साजनदो जगतमें तिनकीहै यह रीत ।
 ज्यों सूर्यादो अग्र भाग पृष्ठभाग है मीत ॥
 पृष्ठभाग है मीत एकतो छिहर करिहें ।
 दूसर तिसे अछादत ततटिन गुन करि भरिहें ॥
 कह गिरिधर कविराय आत्मा एकहि अमल ।
 निज माया करि बन रद्यो सोइ साजन सल ९५ ॥
 चिदविलास प्रपन्न यह चिदविवरत चिद रूप ।
 ऐसी जाक दष्टिहै सो विद्वान अनृष ॥
 सो विद्वान अनृष महाजानी तत दरसी ।
 निज आत्म वितरेक वारता मुने न करसी ॥
 कह गिरिधर कविराय विवकी त्याग निद ।

धावैकयी केदारसड पुनि जावै मक्के ॥
 कहगिरिधरकविराय कुफरके पलनेझूल्यो ।
 चकनेल्यो तुफान जमा सब अपनी भूल्यो ९९॥
 कोपकरै जिस शरसपर परमेश्वर जब आप ।
 लोकन साथ मिलाप पुनि चाहै दिन अरु रात ॥
 चाहै दिन अरु रात वासना उपजै खोटी ।
 कृपणताकेलिये बुद्धि होजावै मोटी ॥
 कह गिरिधर कविराय आपनो करिके लोप ।
 अनातम चितनकरै यही ईश्वरको कोप ॥ १००॥
 करै कृपा जिस पुरुष परअतिशय करिके राम ।
 ताको कोई ना पुरे लौकिक वैदिक काम ॥
 लौकिक वैदिक काम रहै नहिं करनो बाकी ।
 हर जगा हर वसत नल्ल की होवै झाकी ॥
 कह गिरिधर कविराय अविद्याजिसकी मरे ।
 सर्व क्रिया के माहिं एक खुद दरशन करै ॥ १०१॥
 भाग्य सर्वत्र फलतहै नच विद्या पौरुषसरल ।

कुण्डलिया-गि० । (४५)

लभय अविद्या सहित अरोपत जिसमें देव ॥ १०४ ॥
 अदृष्ट समान बलिष्ट नहि देख्यो जगमें मोत ।
 करै भगोड़ा सूरको पुनि कायरकी जीत ॥
 पुनि कायरकी जीत धनीको करहे कँगला ।
 निर्धनको करै धनी शहर करिडारै जँगला ॥
 कहगिरिधर कविराय इष्टको करै अनिष्ट ।
 पुनि अनिष्टको इष्ट ऐसो कौन अदृष्ट ॥ १०५ ॥
 अवश्य मेव भुक्त्यह कृतकर्म शुभाशुभ जोय ।
 ज्ञानी हँस करि भोगह अज्ञानी भोगे रोय ॥
 अज्ञानी भोगे रोय पुन पुनि मस्तक कूटे ।
 प्रारब्ध जो होय बिना भोगे नहि छूटे ॥
 कह गिरिधर कविराय नदीरघ होत रहस्य ।
 जैसे जैसे भाग पुरुषके फल अवश्य ॥ १०६ ॥
 योरे दिनके कारणे कवन उपाधि करै ।
 किस जीवनके वास्ते जगमें पचि पचिमरै ॥
 जगमें पचि पचि मरे आपनी लज्जत सोवै ।

त्यों नर मजबी सगते नरमजबी होजात ॥
 नर मजबी होजात बात हिरदेधरि लीजै ।
 प्राण जायँतो जाँय न मजबीका सग काजै ॥
 कह गिरिधर कविराय अधमहे सनसे शूकर ॥
 ताते भीसो अधम मजबका जो जो कृकर ११० ॥
 फाँसी जब लग मजहबकी तब लग होत न ज्ञान ।
 मजहब फाँसी दूटे जौ पावै पद निर्वाण ॥
 पावै पद निर्वाण निरजन माहि समावे ।
 जनम मरन भव चक्र विषे फिर योनि न आवै ॥
 कह गिरिधर कविराय बोध निन भ्रमै चौरासी ।
 तब लग होत न ज्ञान मजहबकी जबलग फाँसी ॥
 गढे अविद्याने रचे हाथी इव अनत ।
 जोउगिन्यौ जिस सातमें धँसगयो कान प्रयत ॥
 धँसगयो कान प्रयत आपको सुनै न देष ।
 बहिरो अँधरो भयो दशो दिशि तम इक पेपे ॥
 कह गिरिधर कविराय यद्यपि शास्त्र स्मृतिपडै ।

अमृत भक्षण करें उदगारन लेत मुरैया ॥
 कह गिरिधर कविराय अभिमानी पाजी मृजी ।
 आतम विद्या छोर रागनी गावै दृजी ॥ ११५ ॥
 कीजै ऐसी कथा मत निष्फल कथनी जोय ।
 सिद्ध न जिसमें अर्थकी नाहि परमार्थ होय ॥
 नाहि परमाग्य होय वार्ता सो सन तजिये ।
 राम कृष्ण नारायण गोविंद हरि हर भजिये ॥
 कह गिरिधर कविराय सुधा अनुभवरस पीजे ।
 आतम अरु सधान होय सो चरचा कीजै ॥ ११६ ॥
 हानी नाहित तज्ञकी होवत अनृ समान ।
 चौरासी लख जीव मिल जेकर बक तुफान ॥
 जेकर बक तुफान नवल कछु पाछे राखै ।
 जो जो कहनो नाहि सोइसो पुनि पुनि भाषै ॥
 कह गिरिधर कवि तपे भानु अरु वरसे पानी ।
 चले पवन अत्यंत व्योम की जथा नहानी ॥ ११७ ॥
 घाटो बाधो नारदो गईजोत पुनि द्वार ।

कुण्डलिया-गि० । (५१)

दान भोग विन नाञ्ज होत जो दियो न स्वायो १२०
 तपकरवे को नर्मदा मरवेको सुरधुनी ।
 भजन करन को हरि हर भापे ऋषि वर मुनी ॥
 भापे ऋषिवर मुनी वसिष्ठ परासर व्यास ।
 दान करे कुरुक्षेत्र साधन ज्ञान सन्यास ॥
 कह गिरिधर कविराय शिवोद शिवोदजप ।
 करन ग्रामको रोक न या समहै कोई तप ॥ १२१ ॥
 गपौडा भापाका कोई सस्कृतका कोय ।
 कोई गपौडा पारसी अगरेजी पुनि होय ॥
 अगरेजी पुनि होय गपौडा कोई अरनी ।
 ब्रह्मज्ञान विन विद्या सब ज्यों पाऊँ दरी ॥
 कह गिरिधर कविराय बेग समझो कोई मौडा ।
 जाकरि आत्म लभे भलाहै सोइ गपौडा ॥ १२२ ॥
 भापा भूसा फेंकै सडी सस्कृत डार ।
 भय आरोपत निस विषे सोह चिदनिरधार ॥
 सोहचिद निरधार त्याग सगरी गिरदरदी ।

कुण्डलिया-गि० । (५३)

एसो जगमें कौनहैं जोकर सके तगीर ॥
 जोकरसके तगीर सोतो कछुहू नहिं मानव ।
 इव यक्ष गधर्व नलतपत हूवो दावन ॥
 कह गिरिधर कविराय नाश जिन भर्मको कियो ।
 ओक लाज सय त्याग ठीकरो हाथमें लियो १२६
 भेक्षु बालक भारजा पुनि भूपति यह चार ।
 जानेअस्ती नास्तिकछु देही देहि पुकार ॥
 ही देहि पुकार निशि वासर आठो यामृ ।
 नाग्रत सुपने माहि पुरै ना दूसर कामृ ॥
 कह गिरिधर कविराय जगतमें कोउ तितिश्रु ।
 जिनको तृष्णा नाहिं सो एसो विरलो भिक्षु १२७
 एहो सदा इकातको पुनि भजनो भगवत ।
 कथन श्रवण अद्वैतको यही मतोंहै सत ॥
 यही मतोंहै सत तत्त्वको चितवन करणों ।
 प्रत्यक ब्रह्म अभिन्न सदा उर अतर धरणों ॥
 कह गिरिधर कविराय वचन दुर्जनको मटणों ।

लोक ईषणा आदि कामना सकल निवारै ॥
 कह गिरिधर कविराय त्याग अहता तनकी ।
 तत्त्वज्ञान उपदेश दुष्टता हरही मनकी ॥१३१॥
 मनरे मदी बात छद गधा तज हकार ।
 ज्ञान धनुष डरमें ग्रहो करहं ब्रह्म टकार ॥
 करह ब्रह्म टकार जरा तू पग धर आगे ।
 भर्म जो पच प्रकार हृदय सों ततछन भागे ॥
 कह गिरिधर कविराय मूल ससारका सनरे ।
 नष्ट होय अज्ञान द्वैत फिर रहै न मनरे ॥१३२॥
 देही सदा अरोगहै देह रोगमयचीन ।
 यह निश्चय परिपक जिसु सोइ चतुर परवीन ॥
 सोइ चतुर परवीन विवेकी सो है पंडित ।
 करे अत्यंत नरसन आत्मा लखे असडित ॥
 कह गिरिधर कविराय आपना आप सनेही ।
 परमानंद स्वरूप और नाहै एहै देही ॥ १३३ ॥
 अत्यंत मलिन यह देहहै देही अतिशय शुद्ध ।

आत्म सवते पे जु कल्पित कारज कारण १३६
 अमर नाथ इक आत्मा सन देवनको देव ।
 कोटिन मध्ये सतजन जानत है कोउ भेव ॥
 जानतहै कोउ भेव विवेकी पुरुष अकामी ।
 अनुगत अतर बाज व्योमवत अतरजामी ॥
 कह गिरिधर कविराय विना अवेवजुभमर ।
 इन्द्रिय गणको नाथ आत्मा सोतु अमर १३७
 नारायण यह आपहै स्वप्रकाश विज्ञान ।
 निजस्वरूपको भूलवो है कल्पित अज्ञान ॥
 हे कल्पित अज्ञान नाना विध नाच नचावै ।
 षटी यत्र ज्यो र्ध अर्ध इत उत भरमावै ॥
 कह गिरिधर कविराय पावै जब ज्ञान रसायन ।
 स्वप्रकाश विज्ञान आपको विषे नरायन ॥१३८॥
 स्वत परमेश्वर आपहै बन्यो चहै कछु और ।
 अविदिक साधन में लग्यो मृढनको शिरमोर ॥
 मृढनको शिरमोर आपको आपन जानै ।

गों सत चिद आनद निन होत प्रपच असार ॥
 त्त प्रपच असार जहा लग कारन कारज ।
 ाह अनित्य दुर रूप वेद वित कहत अचारज ॥
 ाह गिरिधर कविराय सोइ तू अनुगत पुर पुर ।
 था रागनी तान ग्राम मुरछनमें इकसुर ॥ १४२ ॥
 ाचिद द्रश्यवर्गको पुनि द्रश्यमें अनुसृत ।
 नअध्यस्त तामें सों यावत भौतिक भूत ॥
 ावत भौतिक भूत अरोपित गज्जुसर्पवत ।
 म कर सिद्ध प्रसिद्ध अनात्म रूप असत सत ॥
 ाह गिरिधर कविराय आत्मा तू इसमथा ।
 ाह नाराहित अग्रून्य जुचेतन द्रश्यको द्रष्टा १४३
 मत्ता जो सय जगतको सो भूमाधिष्ठान ।
 ाह प्रत्येक आत्मा सोइ ब्रह्म भगवान ॥
 ाह ब्रह्म भगवान सच्चिदानन्द विश्वेश्वर ।
 ाह भेद परिछेद रहित अर्मात परमेश्वर ॥
 ाह गिरिधर कविराय एक रस जिसकी सत्ता ।

फूटी एक वदाम नरासे धूसर दिनको ।
 बिना आपने आप भरोसा और न निनको ॥
 कह गिरिधर कविराय रहोना बाकी लेते ।
 कीनो जरी हिसाव न निकसी कोडो देतो ॥ १६३ ॥
 पोथी पाना फेंकके विचरो ह्वे निदर ॥
 आत्म अरु सधानकर दिलमें रहे अरु ॥
 दिलमें रहे अराम और कहु ह्वे न ॥
 अहमद पण्डित निशि दिन बने इति ॥
 कह गिरिधर कविराय उरु नरु न ॥
 तू सको पिछान अनेदि नरु न ॥ १६४ ॥
 जानो नहि निरु नरु न ॥
 तिन अखसनकी नरु न ॥
 निनसो नहि कहु नरु न ॥
 राग देप ह्वे नरु न ॥
 कह गिरिधर कविराय नरु न ॥
 बाकी ह्वे नरु न ॥

(६८) कुण्डलिया-गि० ।

नाही ससुग जमात्रि नाहि सोक सेयसचव ।
तास क्रिया पिस जोगरे सोमुरग्य जड अय ॥
सोमुरस जड अय अधको हे चतु चरो ।
निना प्रयोजन अहमक जहँ तहँ करे गिसेगे ॥
कद गिरिपर कगिगय किमीको कदिये काही ।
नो होणे कष्टु निसरत सोतो मपन नाहो १६६ ॥
जामुदानिसे लाभ नाहि नाहि हान
तार्

विगरे तो जो होय कहु विगरनवालीसे ।
 अक्रेद्य अदाद्य अशोप्यको कौन शखस कोभे ॥
 कौन शखस कोभे बुद्धि यह जिसने पाई ।
 तिसके ढिग दिलगीरि कदाचित नाही आई ॥
 कह गिरिधर कविराय कालत्रय जोना डिगरे ।
 अचल अट्रेद्य अकृतम सोकहु कैसे विगरे १७४ ॥
 देहदु खकी खानहे गृह सत शोक किसान ।
 अविद्या जेहे आपनी जन्माकर पहिचान ॥
 जन्माकर पहिचान समझ जो सुखकी खानी ।
 जामे वेदप्रमाण पुन आपत की बानी ॥
 कह गिरिधर कविराय निरकुश तृतीएह ।
 छूटेतनु अभिमान द्रष्ट फिर रहे न देह ॥१७५॥
 सासीका लक्षण सुनो साक्षी कहिये सोइ ।
 उदासनि चेतन्य पुनि समीपवर्ती जोइ ॥
 समीपवर्ती जोइ सोइतो साक्षी होई ।
 इन लक्षण ते रहित को साक्षी कहे न कोई ॥

विचार ज्ञान रज्जु मयनका जस लस्कर ।
 दृष्टवाल्मीकि रज्जु मयनका तस्कर ॥
 रज्जु गिरि रज्जु गिरि चर निन होये जाफत ।
 नानयसामना प्रन रज्जु नननका आफत ॥ १८५ ॥
 राट राट नवलगद नवलग चाल्यहु दृष्ट
 अनमुग नवल राभट मय मिटजाइ अनिष्ट ।
 मय मिटजाय अनिष्ट रज्जु उत्तर रा रागट
 चहा जाट नट जानट नवल मन भया इकागर ।
 रज्जु गिरि रज्जु गिरि राम चारि फिर ओर धाइ
 चारि नवल रज्जु ज्ञान विना ना मिटहे हाट ॥ १८६ ॥
 दशमाग्रज अध्यामदे नवल का जो मृल
 नवल रज्जु दशभिमान हे नवलग मिटेन शूल ॥
 नवलग मिटे नशूल को केनी चतुराई ।
 दश चने जपजने नसुको होन सहाई ॥
 रज्जु गिरि रज्जु गिरि ज्ञानदृष्ट देवे चसमा ।
 भूला विद्या नाश गेट मद्रग्नेनदशमा ॥ १८७ ॥

थडा जत्तो उभय कर होत साधुकी सेव ।
 जगमें एक न होइजो धन्यो रहे गुरुदेव ॥
 धन्यो रहे गुरुदेव भक्ति तिस करे न कोई ।
 निनकार न कछुकारज उत्पन्न हुया न होई ॥
 कह गिरिधर कविराय त्याग कर मलिन सपधा ।
 जोधन होवे पास सतपर कीजे थडा ॥ १९० ॥
 आत्मरथी शरीररथ बुद्धि सारथीजान ।
 मनडोरी इन्द्रिय हय मारग विषयपिछान ॥
 मारग विषय पिछान देह इन्द्रिय मन योगा ।
 दुख सुख भोगे भोग तत्त्ववित कह प्रयोगा ॥
 कह गिरिधर कविराय हौएही परमात्म ।
 बुद्धि सारथी जान देहरथ रथीनु आत्म ॥ १९१ ॥
 जेपी आत्म देवइक पुत्रादिक सन्शेष ।
 यह विवेक जाकेहिये ताको कहाँ कलेश ॥
 ताको कहा कलेश समझ हृदय जय आई ।
 धन्यो अन्यायास तदात्मरहे नराई ॥

कह गिरिगर कविराय चामम फन न पेपी
 अभय निरवन देव आतमा मात्र शर्पा ॥ १९२ ॥
 शिखमूढ विभिन्न पुनि एकाग्रता निरोध
 पचभूमिका चित्तकी आतम इक अविरोध ।
 आतम इक अविरोध भूमिकाको परकाशक
 आप हुलास स्वरूप पुन जड वर्ग हुलासक ।
 कह गिरिवर कविराय चिदानन्द सदा अलित
 लिपाय मान मन बुद्धि वृत्तिहे जामें शित ॥ १९३ ॥
 जाग्रत सुपन सुषोषति मृच्छा पुना समाधि
 पच अवस्था बुद्धिकी आतमरहित उपाधि ।
 आतमरहित उपाधि अकता सदा अभुक्ता
 क्षुधा पिपासा हृष शोक मत्सरते मुक्ता ॥
 कह गिरिवर कविराय वृत्ति विक्षेपइकाग्रत
 सती अनात्म धर्म समाधि पर्यंत सों जाग्रत ॥ १९४ ॥
 माया मोह मद राग पुनि ममता दंभरु काम ।
 यह जामें नहि पाइये सो परमेश्वर राम ॥

सो परमेश्वर राम सर्वका जानन हारा ।
 और सबे अघ्यरत आप धिष्ठान अपारा ॥
 कह गिरिधर कविराय ध्यानधर सुनरे भाया ।
 सोतू भूमा वृद्धि अरोपित जिसमें माया ॥१९५॥
 आश्रय आशा उभय तजि सबे दुक्कड़ो माग ।
 कहू किनारे पड़रहे रास टागपर टाग ॥
 रास टागपर टाग चाह चिंता सब सोवै ।
 भावै जागै निशिभर अथवा दिनभर सोवै ॥
 कह गिरिधर कवि मरियत ठाकुर द्वार उपासरे ।
 धर्मशाल पुनिडाढ रहै भिक्षुनि आसरे ॥१९६॥
 काटेतले विछायके करै पुरुषको जैन ।
 देत समयको दोष पुनि तनकपरे नहि चैन ॥
 तनक परे नहि चैन काल अय आयो भारी ।
 जिनकी चसमें करै अगुरिया देवत गारी ॥
 कह गिरिधर कविराय मोल देले बेजाटे ।
 ताकर चहै अराम गाढ़कर तनमें काटे ॥१९७॥

कह गिरिधर कविराय यही तो कमला रोग ।
 अहता उभय प्रकार पुन यद किंचित भोग २००
 तीन ईपना त्यागके करे मुमुक्ष शोध ।
 सोपग्रहको क्योंचहें जिनके आत्म बोध ॥
 जिनके आत्म बोध बैराग्य आइ चलाई ।
 आगे देवनहार जहा तहें है महमाई ॥
 कह गिरिधर कविराय सुनोवें कदी न दीन ।
 निसने दई उठाय वासना मनसेतीन ॥ २०१ ॥
 मेरी तेरी छोडके पक्षापक्षहि नास ।
 राग द्वेषको दूरकर निजानद रसचास ॥
 निजानद रसचास और रसलागे फीके ।
 एक ज्ञानके भये दुस मिटजावें जाके ॥
 कह गिरिधर कविराय रगजोपरे गेरी ।
 तब यह होवें सफल तजै जब मेरी तेरी ॥ २०२ ॥
 दुखी परमेश्वर वनरद्वो भई आपनी चूक ।
 परमानद रसछाडके चाटन लाग्यो चूक ॥

चाटन लाग्या वर गरीना बहमक गाइ ।
 निमका चितन कर गजिनम मुग डरगाइ ॥
 कह गिरिधर कविराय त्या नाच ना मगी ।
 चीने अपना आप करना राव दुग्या ॥ २३ ॥
 मोला लाक पुकारद गमन मन दानग
 पुन किसानको मनकरा गृहम लागेग ॥
 गृहम लागेग अगिया रान दूटे ।
 मिले रिक्की सन कुपत्तोका मंग छूटे ॥
 कह गिरिधर कविराय त्याग कर माग ओला ।
 जान नान परकार आपको लसले मोला २०४ ।
 जोड़े वृत्ती मध्यमे सब तरफसे मोड़ ।
 पुन प्रमादी नरोकी तनकरासे लोड़ ।
 तनक न रामे लोड़ बहुत तिन साथ न बोले ।
 यार्गीको अचल करे जो बहुरि न डोले ।
 कह गिरिधर कविराय प्रीति निपयनकी तोड़े ।
 सब तरफमे सेच चित्त प्रत्यक्रमें जोड़े ॥ २०५ ॥

कारण महा विछेपका मेला जात जमात ।
 इन समान ससारमें और न कोउ उपाध ॥
 और न कोउ उपाधि यथा एहे त्रय व्याधी ।
 भोजन इनमें धसे तिनोको कहाँ समाधी ॥
 कह गिरिधर कविराय उपद्रव जो अतिदारन ।
 राग द्वेष अपमान मान इनका त्रय कारन ॥ २०६ ॥
 रोइ रोइके पाइये रुपिया जिसका नाम ।
 जगजाये फिर रोइये इह मुख जिसको काम ॥
 इह मुख जिसको काम इसम तिसकाहे रुपी ।
 जिसके हेत भजूरी करै उठावे कृपी ॥
 कह गिरिधर कविराय खोज कर्म धोइ जोई ।
 पुन वणिज नौकरी कृपीकर रोई रोई ॥ २०७ ॥
 गई गई पुनि गइरे करके निशि दिन सोर ।
 घड्याल पुकारै और कह्युते समझी कह्यु और ॥
 ते समझी कह्यु और यथार्थ नाहम भापी ।
 तापर इक दृष्टांत सुनो बदरनकी सापी ॥

जपे कौनको जाप करै फिर किनको सेवा ।
 भिन्न आपसे देखै नाकोउ देवी देवा ॥
 कह गिरिधर कविराय जपे निशि वासर मतर ।
 अह सच्चिदानन्द अखण्ड अद्वितीय स्वतन्तर २११।
 तृपावतको पतित नर पुन तपायो गाम ।
 सो नहि जावै गग ढिग गगासों उपराम ॥
 गगासों उपराम सुरसरी तीर न जावै ।
 स्वर्धुनिको क्या काम जु ताके ढिग चलिआवै ॥
 कह गिरिधर कविराय त्यों नर शिसग्रास्यौ मृषा
 सो सतसग न करै सतको क्या है तृपा ॥२१२॥
 ग्रही असीकर ज्ञानकी करी अविद्या घात ।
 लोक ईषणा वासना भई दीनता पात ॥
 भई दीनता पात सहित देह दृश्य असाता ।
 जात पात सन गई जगतका दृष्ट्या नाता ॥
 कह गिरिधर कविराय भ्राति तिसके डप रही ।
 ब्रह्मविद्यातेग हाथमें जिसने ग्रही ॥२१३॥

कुण्डलिया-गि० । (८७)

कह गिरिधर कविराय वासना रसो न भोरा ।
 रच न लागे दाग रहे कोरेका कोरा ॥ २१६ ॥
 सग न कोऊ राखिये त्याग आनकी आश ।
 एकाएकी विचारिये तोड़ि भ्रातिकी पाश ॥
 तोड़ि भ्रातिकी पाश रहे वनमें वा जनमें ।
 आत्म चितन करै सदा निशि वासर मनमें ॥
 कह गिरिधर कविराय चढे जब अपना रग ।
 किसकी राखे चाह करे पुनि किसका सग २१७॥
 चार पहर दिन हरवसत चार पहर पुनि रात ।
 आत्म चितन कीजिये त्याग अनात्म बात ॥
 त्याग अनात्म बात प्रसग न करहुँ चलावे ।
 अद्वय असड अपार आत्म मन तिसमें लावे ॥
 कह गिरिधर कविराय आपको चीने सार ।
 देह मन इन्द्रिय प्राण यह मिथ्या जाने चार २१८।
 कारह काम करना जोऊ सोतो कीजे आज ।
 मूल अविद्या नीदते शीघ्रहि तू अब जाग ॥

कुण्डलिया-गि० । (८९)

दोहा ।

परम विस्तरु ज्ञानिवर, गिरिधरजी कविराज ।
कुण्डलिये यह तिन रचे, जिज्ञासु जन काज ॥ १ ॥
हे दोसो इकीस यह, कुण्डलिये अतिसार ।
ताको सम्यक् शोधके, सामकीन इकतार ॥ २ ॥

इति श्रीकविगिरिधर कृत कुण्डलिया

प्रथमभाग समाप्त १

महिमाजो निर्वेदकी, को कहि सके उदार ।
 त्यागी बधनसों मुक्त, बाकी सब गिरफ्तार ॥
 बाकी सब गिरफ्तार दीन आधीन भयोजी ।
 निज स्वरूपको भूल आपको मान लियोजी ॥
 कहि गिरिधर कविराय नलागत है इक लहिमा ।
 जिस क्षण कर है त्याग उसी क्षण होवत महिमा २४
 परमारथ पहिली सिढी, जासु नाम निर्वेद ।
 पापर ताको नाले है, पावत हैं नित खेद ॥
 पावत है नित खेद उसे नहि त्याग सके मुध ।
 मोह मदिरासे मत्त स्वपर की नहीं रही शुध ॥
 कहि गिरिधर कविराय जो नस्तनु सोत अकारथ ।
 बाह्य मुखी हो रहे न समझे कछु परमारथ ॥ २२५ ॥
 तहँ विराग की क्या कथा, इन्द्रिय जहँ आराम ।
 जौन तौन परकार कर, पोपे हाडरुचाम ॥
 पोपे हाडरु चाम बाह्यमुख भये जनुनी ।
 करै अपना घात अनात्मदर्शी एनी ॥

मा जानले स्वकी तीनको एकै रूपम् ।
 स्थि मास नस चर्म रोम मल मूत्राहि कूपम् ॥
 हि गिरिधर कविराय पुरुष इन क्रिये अजारी ।
 मा दुष्ट न और जगत में जैसी नारी ॥ २२९ ॥
 मा मृशति पापको, ज्यहि पिप भुले गँवार ।
 र देखाकर नरक का, सन जन करत सुवार ॥
 जन करत सुवार भ्रमावत विधि पुनि हरिहर ।
 ह रज्जु गलनाथ नचावत कपिवत घर घर ॥
 हि गिरिधर कविराय जोइ नर चाहत मोपा ।
 त्र गह वैराग्य तजै हाटक भूयोपा ॥ २३० ॥
 ज्ञना देखाकर अङ्गको, करै पुरुषको भ्रान्त ।
 न्ता याको कहत है, हरे मनुजकी कान्त ॥
 मनुजकी कान्ति नाम तिसकाहे वामा ।
 मापे नरको बाँध कण्ठ दृढ मोहकि दामा ॥
 हि गिरिधर कविराय पहिर कर करमें कङ्गना ।
 य अनर्थ को हेतु कधी गृहलावन अङ्गना ॥ २३१ ॥

सब अनाकर गङ्गा पगम्बर उम्मत कार
 रोजा सुनत हुगन अगह कानेन निमाजा
 कहि गिरिधर कविराय यह रस्ता पाया सौदा
 जामे मजहब फनाह एकला मजहब मौला २३
 योगी डरे योगमें, भोगी डरे भोग
 योग भाग जाक नही सो विद्वान अरोग
 सो विद्वान अगम अचाहि अमान असङ्ग
 भेद भावस रहित गुडि निसकी यक रङ्गी
 कहि गिरिधर कविराय ज्ञान निहै सब रोगी
 भोगी अटक भोग योग मे अटके योगी २३८
 कलाम पेम्दाकी कथे, अन्तर बैस रह्यो मजह
 रवाहिश दुनियाकी करे, बेवकफसो अजर
 बेवकफसो अजब उड़ो कोई है मुखौलिया
 मूढसभाके मध्य कहावे महा औलिया
 कहि गिरिधर कविराय वस्तु देकरे ललाम
 तिसपरमे अरु तोर सो अहमक लाकलाम २३९

कुण्डलिया-गि० । (९७)

काम शैतानों के करे, औलियाओंकी शकल ।
 गुर नहै इन्सान की, हैवानोकी अकल ॥
 हैवानो की अकल सिहकी गिरा उचारे ।
 सिद्दरानो की क्रिया पकड़ गोवरेड़े मारे ॥
 कहि गिरिधर कवि नरम गरम तर चाहे ताम ।
 भेक्षा खावे मांग यही ऊननके काम ॥ २४० ॥
 जाना लिप्सा हृदय में, बन बैठे उलियाय ।
 ऐसे पीर मुरीद को, दोनों को जुतियाय ॥
 शैनोंको जुतियाय मगज कर तिनका पोला ।
 तैरों लके देइ धडाधड़ जूता सोला ॥
 कहि गिरिधर कविराय पहिर फकिरोंका बाना ।
 अजों न लिप्सा तजे जूत तिनके शिरनाना ॥ २४१ ॥
 बाना करे बतुनिया प्राकृत जन मध फूल ।
 पूछन वालो जो मिले जाय फारसी भूल ॥
 जाय फारसी भूल प्रबल कोइ फुरे न युक्तो ।
 बाग बैसरी रुके न मुखसे निसरे उक्ती ॥

कहि गिरि ५५ कविराय मूढ मिलकर कम जा
 सर्वपक्षसे रहित बनावे घरमें वाता ॥ २४२
 आश्रम वर्ण कुल पन्थ में, जाका है आवेश
 ब्रह्मविद्या ता हृदयमें, नाही करत प्रवेश
 नाही करत प्रवेश विप्र ज्यू इवपच अगारा
 बहु बीथीके डार बहु निकसत वागद्वारा
 कहि गिरिधर कविराय भ्रमे भ्रममें निशिवासम
 जा काहै आवेश पन्थ कुल वर्ण मय्य आश्रम २४३
 धरचो काँच सडूकमे, रत्न चुराहे डार
 कुत्ती पाली गहम, दीनी धेनु निकार
 दीनी धेनु निकार बडो बुधिवत कहावे
 रजत कीच में मेल चामके दाम चलावे
 कहि गिरिधर कविराय जान निज रत्न ॥ २४४ ॥
 पुरुष साध्य कतंव्य हृदय सडूक ले धरचो ॥ ३०
 कौड़ी वाले सागुका, कौड़ी मिले न दाम
 कौड़ी बिना गृहस्थका, कोई लेय न नाम ॥

कोई लेय न नाम जहाँ तहँ होय अनादर ।
 ओड जात सन तिसको पिसर ओ पिसर बिरादर ॥
 कहि गिरिधर कवि दुनिया तिसके रहे कनौड़ी ॥
 सो गृहस्थ परधान चारहैं जिसपै कौड़ी ॥२४५॥
 दारा मरै गृहस्थकी, खाना तिसे सरान ।
 राखै राँड फकीर जो, रहे न तिसकी आन ॥
 रहे न तिसकी आन उभय आलमसे जावे ।
 ना वह रह्यो गृहस्थ फकीर का पद नहि पावे ॥
 कहि गिरिधर कविगय शोक जो सिन्धु किधारा ।
 सो नर तिसमें बहे अहे जिसके गृह दारा ॥२४६॥
 रस सह देखे यती जो, कनक कामिनी दोय ।
 तिसो समय वह पतितहो, ब्रह्महत्यारा होय ॥
 ब्रह्महत्यारा होय तेज सन हत होजावे ।
 मनकी शक्ती चक्षु वाणि ये सकल पलावे ॥
 कहि गिरिधर कविराय एक मन ओ इन्द्रिय दश ।
 तिनको करै निरोध त्याग कर लौकिकजेरसर ॥२४७॥

हि गिरिधर कविराय विना परिग्रहसोधनी ।
 जिसकी बुद्धि अद्वितीय बाततिसकी सवनी २५०
 ग चिह्न अज्ञान का, चित व्यायामस्थान ।
 स तरुमें सबजी कहा, जिसकोटर किरशान ॥
 कोटरमें किरशानु लता फल रहन न पावे ।
 शब्दादि में पीत जहा तहैं ज्ञान पलावे ॥
 हि गिरिधर कविराय विषयका कैरदेत्याग ।
 आत्मचिन्ता कर रहे नहीं हो लोकि करार २५१ ॥
 ल, तरुण, अरु वृद्ध यह, अवस्थातनुकी तीन ।
 नों में जो अन्तर्की, अति कनिष्ठ यह चीन ॥
 तिकनिष्ठ यह चीन करे धीको विपरीत ।
 स्मरण शास्त्र होत जो पूर्वकीयो अधीत ॥
 हि गिरिधर कविराय जाति सन ख्याब खयाल ।
 विद्याका परिणाम न समझतहैं वृद्धबाल २५२ ॥
 रा अवस्थाके सहस्र, नहिं नीच अवस्था आन ।
 भिव्यञ्जक सब रोगकी, किरपणताकी खान ॥

सैवत तेरी किसी सों, नहि नथी न होग ।
 द्रवत जिन सँग करे तू, सब सरायँ के लोग ॥
 न सरायँ के लोग समझ कर पकड़ कायदा ।
 मझेगा जिसवक्त तुझे तब होगा फायदा ॥
 कहि गिरिधर कविराय जिसमकी जेती किसमत ।
 तनोही तिसहोयन जिस्मीकोंकोइनिसनत २५६
 दो बेटी भार्या, भाई श्वशुर अरु सार ।
 पैता पितामह आदिले, सब मतलबके यार ॥
 सब मतलबके यार नहीं इनमें कोई तेरो ।
 मयो तुझे परमाद जो इनको बन रह्यो चेरो ॥
 कहि गिरिधर कविराय सनसे झगरा मेरो ।
 नतू चाप किसी फेर, तेरा कोई ना बेरो ॥ २५७ ॥
 ममता सुत बित नारि में, त्रयतनु में हंकार ।
 निज आतम निज्ञान बिन, चारों वर्ण चमार ॥
 चारो वर्ण चमार पुन चारोही आश्रम ।
 प्रत्यक बोध विहीन नाच डूबे निन विभ्रम ॥

कुण्डलिया-गि० । (११५)

(रूपा देह अप्यासर्फी अविद्याको परताप ।
 प्रेममुग भये स्वरूपते जेपे अनानम जा० ॥
 जेपे अनानम जाप न सारासार विचार ।
 लौकिक शब्द विचित्र परम्पर बैठ उचार ॥
 यदि गिरिधर परिराय आपका मान्या मया ।
 ऐसे मतिन सरल देह अप्यास र्फी हृषा २८८
 परनो जो सो ना करो, मिल देह इन्द्रिय साथ ।
 गाय ठाक पकृत में फिरे दागनो साथ ॥
 फिरे दागनो साथ निक्कमे रच पैदा ॥
 आपु हीनी गीय मुपन इन भंगव भंड ॥
 यदि गिरिधर परिराय होत तब तेरो तनो ।
 शून्यतय र्दाने आप छोड परमात्मो वरनो २८९
 परमा हो श्रीगान्धी, हो दुग्धो परताप ।
 पुन दुग्धायं आपनो, बटे अदिदा पाप ॥
 बटे अदिदा पाप बटे नद दह मद्यो ।
 देह र्ही २९ दन प्राप्ति नाहि होत न रोद ॥

(१८३) कुण्डलिया-गि० ।

सो मम रूपं अनुप अकृत्रिम अमित अदूट धन ।
नाहि चोम किमि गदे दोम नहि लहे ओर तन ॥
चितान्ताण्य पर्यायानजय तव अगुन भय उपशमित
ज्ञानो नि अक नि कलक निजज्ञान रूप निरम तनि
अकस्मात् भय निवारण मन्त्र । छप्पय
शुद्र बुद्ध अविरुद्ध सदन सम रुद्धि मिद्धि सन ।
जउत जनादि अनन्त अनुल अविचल साहस मन
चिद् विलाम प्रकाश रहित विरुल्य सुधानर ।
नहि दुःखा नहि कोप दोष नहि कटु न अचानर ॥
तव यद्विवेक उपगन्तव्य अकस्मान् भय नहि दिना
ज्ञानानि शंकनि कलक निजज्ञान रूप निरम तनि

(इति श्रीगिरिपार्वती मन्त्राय विचारण मन्त्र)

इति गिरिपार्वती कुण्डलिया गमना ।

कुण्डलिया, इति गिरिपार्वती विचारण -

गमनाय श्रीगिरिपार्वती, योऽहं योऽहं योऽहं - यवः

